Research Guru
Online Journal of Multidisciplinary Subjects (ISSN : 2349-266X)
Volume-13, Issue-2, September-2019
Impact Factor:4.081
www.researchguru.net

ज्योतिषशास्त्रमें द्वादशभावाधारित रोगयोग एक अध्ययन

डॉ. चेतन के. पंडया
बरोडा संस्कृत महाविद्यालय, एम.एस.युनिवर्सिटी ओफ बरोडा, वडोदरा (गुजरात) Mobile :98257 60880
E-mail : chetanpandya1212@gmail.com

।। सारांश ।।

भारतीय ज्योतिषशास्त्र में रोगविषयक बहुत विस्तार से लिखा गया है, मूल ज्योतिषशास्त्र वेद का एक अङ्ग ही है इसलिए इसे वेदाङ्ग भी कहा जाता है। ज्योतिषशास्त्र को वेद का अङ्ग माना गया है। आनेवाले समय में क्या घटित होने वाला है इससे अवगत कराके जीवन को सफल और सरल बनता है। मुख्यतः संसार में किसी भी पद या सिद्धी को पाने के लिए शरीर ही मुख्य साधन है। यदि शरीर स्वस्थ, निरोगी एवं प्रसन्नचित्त होगा तो ही सब कुछ प्राप्त कर शकते है, इसीलिए कहा गया है प्रथम धर्म यही है कि ***शरीर को स्वस्थ और सुरक्षित रखे।***

ज्योतिषशास्त्र के विभिन्न एवं मूल आचार्यो ने अपने ग्रन्थों में रोग विषय पर सब ने अलग प्रकरण रखकर रोगविषयक जानकारी दी है। आयुर्वेद और ज्योतिषशास्त्र का काफी घनिष्ठ संबंध है। मूलतः पंचभूत से ही मानवशरीर बना हुआ है। पंचभूत पाँच ग्रहो में बटाँ हुआ है जैसे भौम - अग्नि, बुध - भूमि, बृहस्पति - आकाश, शुक्र - जल, तथा वायुतत्व शनि का है। इसीलिए कहते है ***" यत् पिण्डे तत् ब्रह्माण्डे "****। शरीर में जिस तत्व की कमी होगी या कमजोर होगा उसी से संबंधीत रोग होगा। इसी प्रकार ग्रहो के बल - निर्बल होने पर योग बनते है और वही योग - रोग से सम्बन्धित होने से रोग योग बनते है।*

शब्द कूंच

चार वेदो में ज्योतिषशास्त्र वेद का अङ्ग, आकाशादि पाँचतत्व का ग्रह और मानवशरीर पर आधिपत्य, ज्योतिषशास्त्र के द्वादशभाव तथा ग्रह द्वारा रोगनिर्णय ग्रहो की प्रकृति और मानवशरीर की प्रकृति, आयुर्वेद, पाँच तत्व तथा ज्योतिषशास्त्र अनुसार रोगयोग विचार।

प्रस्तावना :-

भारत की संस्कृति परंपरा एवं धर्म के मूल आधारस्तंभ चार वेद है। इन चार वेदो में सबसे प्राचीन और पहला ऋग्वेद है। इसी वेद के अंतर्गत ज्योतिषशास्त्र और आयुर्वेद का सांगोपाग वर्णन है। ज्योतिष और चिकित्सा दोनो एक-दूसरे से पूर्णतया जुडे हुए है। हमारा मानवीय शरीर पांच तत्वो से बना है और अन्त में पांच तत्वो में ही विलीन हो जाता है। आकाश के पांच पीण्ड भी पांचतत्वाधारित है। भौम-अग्नितत्व, बुध-पृथ्वीतत्व, बृहस्पति-आकाशतत्त्व, शुक्र-जलतत्त्व और शनि-वायुतत्त्व है। इसीलिये कहते है **" यत् पिण्डे तत् ब्रह्माण्डे "**।

जातक के निरोगी स्वास्थ्य का आधार उसके माता-पिता के द्वारा किये गये आधानकाल से आरंभ होता है। आधानकाल के समय आधानलग्न में जिस प्रकार ग्रहो की स्थिति होगी उसी प्रकार से मानवशरीर सहज जन्म लेगा। आधानकाल से दशमे महिने तक की स्थिति और प्रत्येक मास के अधिपति ग्रहो का वर्णन है। वराहमिहिराचार्य कृत बृहज्जातक के चतुर्थ अध्याय के 16वे श्लोक में लिखा है।

कललघनाङ्कुरास्थिचर्माङ्गजचेतनताः
सितकुजजीवसूर्यचन्द्रार्किबुधाः परतः।
उदयपचन्द्रसूर्यनाथाः क्रमशो गदिता
भवति शुभाशुभं च मासाधिपतेः सुदृशम्

।। **बृहज्जातकम्** (4 / 16)

अर्थात गर्भाधान के प्रथम में स्त्री-पुरुष के रक्त और वीर्य का सम्मिश्रण होता है, यह प्रथम मास का स्वामी शुक्र है, द्वितीय मास में सम्मिश्रण में घनत्त्व आता है द्वितीय मास का अधिपति मंगल है। तृतीय मासाधिपति बृहस्पति है, तृतीयमास में पिण्ड में अंकुर निकलते है एक मानवाकृति की संरचना होती है। चतुर्थमास में मानवाकृति के अंकुर में हड्डियाँ का (अस्थि का) अवतरण होता है, चतुर्थमास के अधिपति सूर्य है। पंचममासमें बीज का स्वरूप बडा हो जाता है उस पर चर्म का आवरण चढता है अर्थात पाँचवे महिने में जीव को त्वचा आती है, पाँचवे महिने का स्वामी चन्द्र है। छठ्ठे महिने का स्वामी शनि है, छठ्ठे महिने में जीव को केशावृति होती है अर्थात केश (बाल) आते है। सप्तम मास में गर्भस्थ जीव में चैतन्य की अनुभूति होती है उसमें हलन - चलन शुरु हो जाता है, सप्तम मास का अधिपति बुध है। गर्भाधान से अष्टम, नवम, दशम महिनो मे गर्भेष्टलग्न, वर्तमान चन्द्र, सूर्य और ग्रहों की स्थिति अनुसार गर्भस्थ स्थिति ज्ञात होती है। आठवें महिने में बालक गर्भ में माता के द्वारा भुक्त अन्न - रसादि का नाल के द्वारा पान करता है नववें महिने में जीव की गर्भ में उछल - कूद होती है और दशवें महिने में प्रसूति होती है। इस प्रकार इन्सान का जन्म होता है और वही से जीवन की शारिरीक प्रक्रिया शुरू होती है।

अत्याधुनिक युग में इन्सान प्रगति, भौतिकता और ऐशो आराम के पीछे भाग -भागकर अपना स्वास्थ्य खराब करता है सबको एक - दूसरे के आगे नीकलना है। एक - दूसरे से सामाजिक और आर्थिक अच्छा दिखना है। इसी वृत्ति, समय और परिस्थिति के कारण खाना-पिना, उठना-जागना,

रहना-भागना सभी नित्यक्रियाओ में अनियमितता हो गयी है । जिस के कारण बहुत सी शरीर में व्याधियाँ प्रवेश कर जाती हैं । वर्तमान समय में ज्यादात्तर ब्लडप्रेशर - डायाबीटीश और कैंसर जैसे रोग बढ रहे है, हररोज नये - नये रोग जन्म होते है ।

ज्योतिषशास्त्र और आयुर्वेदमें मुख्य तीन प्रकृतियाँ का उल्लेख किया है **1. कफ 2. पित्त एवं 3. वायु** । सूर्य से शनि तक के सभी ग्रहो की प्रकृति वर्णन ज्योतिषशास्त्र में है । होराशास्त्र में मुख्य द्वादशभाव 12 राशि 9 ग्रह है । भाव, राशि और ग्रह की प्रकृति अवस्था और अङ्ग अनुसार शरीर में रोग और पुष्टी को इंगित करता है ।

ग्रहो के प्राकृतिक एवं शारीरिक आधिपत्य इस प्रकार है ।

1. सूर्य: अस्थि, जैव, विद्युत, श्वसनतन्त्र, नेत्र और पित्तप्रकृति ।
2. चन्द्र: रक्त, जल, अन्तःस्त्रावी ग्रन्थियाँ (होर्मोन्स) मन और वात् कफाधिकप्रकृति ।
3. मंगल: यकृत, रक्तकर्णकाएँ, पाचनतन्त्र और पित्तप्रकृति।
4. बुध: अंग-प्रत्यंग स्थित तन्त्रिकातन्त्र, त्वचा और त्रिदोष ।
5. गुरू: नाडीतन्त्र, स्मृति, बुद्धि और कफाधिक ।
6. शुक्र: वीर्य, रज, कफ, गुप्तांग तथा कफ एवं वायु ।
7. शनि: केन्द्रीय नाडीतन्त्र तथा वायुप्रकृति ।
8. राहु - केतु: शरीर के अंदर आकाश और अपानवायु ।

मन्दोलसः
कपिलदृक्कृशदीर्घगात्रा
स्थूलद्विजः
परुषरोमकचोडनिलात्मा ।
स्नास्वस्थयसृक्त्वगय शुक्रवसे च मज्जा

मन्दार्कचन्द्रबुधशुक्रसुरेज्यभौमा: ।।

बृहज्जातक (2 / 11)

सूर्य - पित्तदोष, चन्द्र - कफ एवं वातदोष, मंगल - पित्तदोष, बुध - त्रिदोष, बृहस्पति - कफदोष, शुक्र - कफ - वायु, शनि - वातदोष ।

सूर्य - अस्थि (हड्डी), चन्द्र - रक्त, मंगल - मज्जा, बुध - तव्चा, गुरू - वसा, शुक्र - वीर्य, शनि - नाडी इस प्रकार शरीर के सभी आंतरिक और बाह्य सर्वांगो में ग्रहो के स्थान एवं प्रभाव स्थित हैं ।

पुराणादि शास्त्रोनुसार के वचनानुसार कलियुग में मनुष्य भोग और स्वाद के आधिन रहेगा, वैसे वर्तमान समय में सब घटित हो रहा है । लोग भोग -विलास और स्वाद के पीछे भाग रहे है । सूर्य-शुक्र-मंगल-राहु से प्रभावित लोग ब्लडप्रेशर, डायाबिटीस, थाईरोड, कैंसर, मोटापन, चर्मरोग, आँखो की कमजोरी, बधिरत्व, संतान न होना या विलंब होना, मूकत्व (बोल न पाना), विकलांगता, पेट और उससे संबधित रोग, कीड़नी, लीवर, नये-नये प्रकार के बुखार और बिमारीयाँ से पीडीत है । उक्त सभी रोगों को ज्योतिषशास्त्र के होराशास्त्र विभाग में द्वादशभावों द्वारा वर्णित किया है । ज्योतिषशास्त्र के जातकालंकार नामक ग्रन्थ के द्वितीय एवं तृत्तीय अध्याय में सभी प्रकार के रोगयोग दिये गये है ।

नेत्रे पृष्ठे च शुक्रो दिनकरतनयः स्यात्पदे चाधर चेत् ।
केतुर्वा सैहिकेयस्तदनु तनुपतिर्भौमवित्क्षेत्रसंस्थः ।।
आभ्यामालोकितः सन्भवित हि कति चित्स्थानगो वा तदार्नी ।
नेत्ररोगी नरः स्यात्प्रवरमतियुतैर्हीरकैज्ञर्यमेवम् ।। १८ ।।
षष्ठेशे पापयुक्ते तनुनिधनगते नुः शरीरवर्णाः स्यु ।
श्वादेश्यं तज्जनीत्रीजनकसुतवधुबन्धुमित्रादिकानाम् ।।
इत्थं तत्स्थानगामी शिरसी दिनमणिश्वानने शीतभानुः ।
कण्ठे भूमीतनुजो हृदि शशितनयो वाक्पतिर्नाभिमूले ।। १७ ।।

अर्थात् पापग्रह से युक्त लग्न वा अष्टमभाव में स्थित हो तो वह मनुष्य को व्रण होता है । उसी प्रकार ही माता-पिता-पुत्र-स्त्री-भाई मित्रादि स्थान के स्वामी यदि प्रथम वा अष्टमभाव में पापग्रहयुक्त होकर बैठे हो तो उपरोक्त सब को व्रण (घाव) होता है । यदि षष्ठेश सूर्य हो तो सर (शिर) में, चन्द्र हो तो मुख पर, मंगल हो तो कण्ठ में, बुध हो तो हृदय में, बृहस्पति हो तो नाभिस्थान में व्रण होता है । यदि शुक्र हो तो नेत्र तथा पिठ में, शनि हो तो पैर में तथा राहु अथवा केतु हो तो अधर (होठ) पर व्रण होता है । मंगल अथवा बुध की राशि में बैठा हुआ लग्नेश यदि मंगल अथवा बुध से दृष्ट होकर किसी भी स्थान में हो तो वह मनुष्य नेत्ररोगी होता है ।

वर्तमान समय में विरुद्ध प्रकृति के आहार-विहार और खाना प्रचूर मात्रा में बढ रहे है । जिसके कारण वर्तमान समय के लोगो के शरीर में मेद तथा चर्मरोग से संबंधित रोग बढ रहे है । आयुर्वेद अनुसार दहीं और प्याझ, दूध और केले, फ्रुटसलाड इत्यादि प्रकृति विरुद्ध है, दूध से बने हुए पदार्थ जैसे पनीर, चीझ, बटर इत्यादि गेहूं के आटे से (मेंदा) से बनती चीज - वस्तु से शरीर में मेद एवं चर्मरोग का कारण बनते है ।

यदि शरीर में मेदस्विता बढे तो श्वसनक्रिया, हृदयरोग, रूधिराभिषण से तकलीफ होती है । जातकालंकार नामक ग्रन्थ के तीसरे अध्याय के 12 वें श्लोक में हृदयरोग योग वर्णित है ।

तिग्मांशौ वैरिनाये खलविहगयुते तुर्यगे सूर्यसूनौ ।
हृद्रोगी वाक्पतौ वा भवति हृदि नरः कृष्णपित्ती सकम्पः ।। **जातकालंकार** (3 / 12)

अर्थात् यदि सूर्य षष्ठेश होकर पापग्रहो के साथ चतुर्थभाव स्थित हो तो मनुष्य हृदयरोगी होता है । अथवा शनि वा बृहस्पति पापग्रहयुक्त होकर चतुर्थभाव में रहे हो मनुष्य काले पीत्त से पीडायुक्त एवं हृदयरोगी होता है ।

कल्याणवर्मा रचित **" सारावली "** ग्रन्थ के दसवें अध्याय में अरिष्ट विषयक ज्ञान दिया है । इस अध्याय के 63, 64 श्लोक में नेत्रपीडा एवं रोग विषयक योग लिखे है ।

रूधिराडसौरयुक्तश्चनद्रौ निधनेडथवाडपि षष्ठे वा ।
पित्तश्लेष्यविकारैर्दृष्टिं हन्यादशुभयुक्तः ।। **सारावली** (10 / 63)

दक्षिणमष्टसंस्थः सव्यं तु हरेत्समाश्रितः षष्ठम् ।
सौम्यैर्निरोक्षिततनु सध्यो न हरेतु पश्चाद्वा ।। **सारावली** (10 / 64)

अर्थात् यदि चन्द्रमा-भौम व शनि से युक्त होकर छठ्ठे अथवा अष्टम भाव में हो अथवा किसी भी पापग्रह से युत होकर 6 वा 8 स्थान में हो तो पित्त के विकार से जातक का नेत्र नष्ट होता है यदि अष्टमभाव में स्थित हो तो दक्षिण नेत्र, षष्ठ में स्थित चन्द्रमा हो तो वाम नेत्र नष्ट होता है ।

एकादशे तृतीये होरायां पापसंयुते शशिनि ।
कर्णविकलो नरः स्यात्पापग्रहवीक्षिते सद्यः ।। **सारावली** (10 / 68)

नवमे दक्षिणकर्ण वामं वै पञ्चमे ग्रहो हन्यात् ।
अत्रैवः सौम्यभे वा शुभदृष्टे वा शुभं वाच्यम् ।। **सारावली** (10 / 70)

अर्थात् यदि कुण्डली मे पापग्रह से युत चन्द्रमा एकादश वा तृतीय वा लग्न भाव में पापग्रह से दृष्ट हो तो जातक को शीध्र ही कर्ण (कान) रोग होता है । यदि नवमभाव में पापग्रह से दृष्ट हो तो दक्षिण कान पञ्चम में ग्रह हो तो वाम कान में रोग होता है अर्थात् नष्ट होता है । यहाँ भी यदि शुभग्रह की राशि में वा शुभग्रह से योग दृष्ट होने पर शुभफल कहना चाहिए ।

वराहामिहिराचार्य रचित बृहज्जातकं में श्वास, क्षय, कुष्ठी आदि रोग के योग अनिष्टाध्याय में लिखे है ।

अन्तः शशिन्यशुभयोर्मृगगे पतङ्गे श्वासक्षष्लिहकविद्रधिगुल्मभाजः ।
शोषी परस्परग्रहांशत्रयो रवीन्द्रोः क्षेत्रेडथवायुगपदेकगयोः कृशो वा ।। ८ ।।

बृ. जा. 23 / 8

अर्थात् जिस जातक के जन्मकाल में चन्द्रमा धनराशि के मध्यनवांश (पञ्चम नवांश) में स्थित हो कर शनैश्चर और मंगल से युत्त या दृष्ट हो तो वह जातक कुष्ठी होता है । यथा चन्द्र किसी राशि में मीन-कर्क-मकर या मेष के नवांश में स्थित हो और शनैश्चर, मंगल इन दोनो से युत्त वा दृष्ट हो तो जातक कुष्ठी होता है ।

इस पूर्वोक्त योग में अगर चन्द्रमा के उपर शुभग्रह की दृष्टि हो तो कुष्ठी नहीं होता है, किन्तु खुजली, दाद आदि रोग वाला होता है ।

पं. मंत्रेश्वर रचित फलंदीपिका नाम ग्रन्थ में रोग के विषय में बहुत विस्तार से लिखा है । इस ग्रन्थ का चौदहवाँ अध्याय रोग निर्णय है रोग संबंधित सभी जानकारी इससे प्राप्त होती है । रोगनिर्णय अध्याय में सूर्यादि ग्रह द्वारा होनेवाले रोग मेषादि राशि के प्रकृत्वाधारित रोग तथा भावाधारित होनेवाले रोगो का वर्णन है । इसमें से संक्षिप्त महत्व के कुछ योग का वर्णन कर कहा हुँ ।

यथा सोग्रे पञ्चमे भवेदुदररूगन्ध्रारिनाथान्विते ।
तद्दत्सप्तमनैधने सगुदरूक्क्षुके च गुह्यामयः ।। १० ।। **फलदीपिका** (14/10)

अर्थात् मंगल पंचम मे होने से उदररोग होता है । (कोई भी उग्रग्रह सूर्य - मंगल -शनि - राहु - केतु) पंञ्चम में होने से पेट में पीडा करता है । पाँचवास्थान पेट का है ।

शुक्र यदि सप्तम या अष्टमस्थान में हो तो वीर्य सम्बन्धी, प्रमेहादि या मूत्ररोग करता है । यदि षष्ठेश या अष्टमेश सप्तममें या षष्ठेश अष्टम में हो तो गुदा रोग होता है । सप्तमस्थान गुह्य जननेन्द्रिय प्रदेश, अष्टम गुदा का स्थान है । यहाँ पापग्रह बैठे हो या दुःस्थान (छठ्ठे आठवें) के स्वामी बैठे हो तो शरीर के उस भाग में रोग उत्पन्न करते है ।

रन्ध्रक्षोर्त्तरुजाथवा मृतपतिप्राप्तक्षदोषेण वा ।
रन्ध्रेशेन खरत्रिभागपतिना मृत्युं वदेन्निश्चितम् ।। १२ ।। **फलदीपिका** (14 / 12)

अर्थात् आठवें भाव में ग्रह हो या ग्रह देखते हो तो किस प्रकार के रोग से मृत्यु होगी यह उपर बताया परन्तु आठवें धर में कोई ग्रह न हो और न कोई ग्रह आठवें धर को देखता हो ऐसी स्थिति में किस रोग से मृत्यु होगी यह बताते है कि आठवें धर के जो रोग बताये गये है उनसे या आठवें धर का मालिक जिस राशि या भाव में बैठा हो उसके -दोष से उदाहरण के

लिए आठवें धर का मालिक पाँचवे धर में हो तो उदर (पेट के) रोग से, चौथे धर में बैठा हो तो हृदय रोग से यदि अष्टमेश सूर्य या मंगल हो तो पित्तज रोग से, शनि हो तो वात रोग से इत्यादि । जन्मलग्न (द्रेष्काण) से जो 22वाँ द्रेष्काण होता है उसका स्वामी भी मृत्युकारक होता है । उपर जो योग अष्टमभाव सम्बन्धी बताये गये है वह लागू न हो तो जन्म द्रेष्काण से जो 22वाँ द्रेष्काण हो उस से 22वें द्रेष्काण का जो स्वामी हो उस स्वामी के जो रोग हों उनमें किसी रोगो के कारण की मृत्यु होती है ।

निष्कर्ष

उपरोक्त विवेचन के विषय से हम ज्ञात कर शकते है कि आयुर्वेद और ज्योतिषशास्त्र का काफी गहरा संबंध है । आकाशादि पाँचतत्व ग्रहो में है वही मानवशरीर में स्थित है । ब्रह्माण्ड में तत्वो के चालन, वहन, अथवा प्रक्रिया के आधार पर ही सृष्टी और जीव के प्रकृति पर असर होती है । मानव शरीर में तीन प्रकृति तथा पाँच तत्वो में जो न्युनता अथवा अधिकता आती है उस से ही शरीर प्रकृति में रोग का जन्म होता है, यह शरीर में कब होगा, कितना होगा, कैसे होगा वह सब ज्योतिषशास्त्र एवं आयुर्वेद से ज्ञात कर शकते है । यह मानव-जीवन के लिए सुलभ साधन और उपाय है ।

विषेशतः मेरा उद्देश्य है कि यह सब रोग जो ज्योतिषशास्त्र के होराशास्त्र में वर्णित है उसीकी जीवनमें ज्यादा - कम असर होती है । जो भाग्यमें लिखा है वह घटित होता है । ईश्वरने समस्या के साथ समाधान भी बनाये है ।

उपरोक्त सभी रोग के आध्यात्मिक निदान भी है जैसे उदाहरण के तौर पर महारोग होने पर मृत्यजंय भगवान की आराधना करते है, क्योंकि शिवजी नवग्रह के अधिष्ठता देव है इसलिए मृत्युजंय जाप-होम इत्यादि करते है ।

" मृत्युंजय महादेव त्राहिमां शरणागतम् ।
जन्ममृत्युजराव्याधि पीडीतं कर्मबंधनैः ।। "

अर्थात् हे ! मृत्युंजय महादेव मैं आपकी शरणमें आया हुँ, जन्म और मृत्यु के समय, बुढार्पे के समय तथा रोगग्रस्त होने पर जो पीडाएँ पीडीत करती है, ऐसे कर्मबंधनो से मुझे मुक्त कर स्वस्थ करे । स्वास्थ्य के लिए हम आदित्यनारायण, नारायण और देवीकी आराधना भी करते है जैसे हररोज सूर्यनारायण को अर्ध्य देना, आदित्यहृदयस्तोत्र पाठ करना, नारायणकवच का पाठ करना, गजेन्द्रमोक्ष का पाठ करना इत्यादि आध्यात्मिक भक्ति से जीवन मे शरीर स्वस्थ, सुखी और प्रसन्नचित्त रहता है । अंतमें आलोक और परलोक को परमात्मा उजागर कर देता है ।

संदर्भ ग्रन्थ :

१. **भारतीय ज्योतिष का इतिहास** - नेमिचंद शास्त्री - भारतीय ज्ञानपीठ, न्यु दिल्ही

२. **बृहज्जातकम्** - वराहमिहिराचार्य - चौखंबा अमरभारती प्रकाशन, वाराणसी

३. **जातकालंकार** - गणेश दैवज्ञ- चौखंबा अमरभारती प्रकाशन, वाराणसी

४. **सारावली** - कल्याण वर्मा - मोतीलाल बनारसीदास, वाराणसी

५. **फलदीपिका** - मंत्रेश्वर - मोतीलाल बनारसीदास, वाराणसी